क्षेत्र कार्य परियोजना

महाराष्ट्रीय सांस्कृतिक लोकनाट्य प्रकार - गोंधळ
एवं
गोंधळ कलाकारों की स्थिति व समस्याएँ - एक अध्ययन

- प्रस्तुतकर्ता -

डॉ.श्यामप्रकाश पांडे

हिन्दी विभाग,

कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय,

आर्वी, जि. वर्धा

महाराष्ट्रीय सांस्कृतिक लोकनाट्य प्रकार - गोंधळ
एवं
गोंधळ कलाकारों की स्थिति व समस्याएँ - एक अध्ययन

भूमिका

अध्याय - 1 - सांस्कृतिक लोकनाटय - एक विश्लेषण

1.1 संस्कृति एवं सांस्कृतिकता

1.2 लोकनाट्य का अर्थ

1.3 लोकनाट्य के प्रकार

1.4 लोकनाट्य के तत्व

अध्याय - 2 महाराष्ट्रीय लोकनाट्य परंपरा एवं गोंधल

2.1 महाराष्ट्रीय लोकनाटय परंपरा

2.2 गोंधळ

2.3. गोंधळ के तत्व -

2.3.1 कथानक

2.3.2. पात्र

2.3.3. संवाद

2.3.4 भाषा-शैली

2.3.5 उद्देश्य

2.3.6 देश, काल, वातावरण

2.3.7 रंगमंचीयता

2.4. गोंधळ की वर्तमान स्थिति -

उत्साह की कमी, आर्थिक भार, सोशल मिडिया

अध्याय - 3 आर्वी परिसर में गोंधळ (गोंधळी) कलाकारों की स्थिति

3.1 पारिवारिक स्थिति

3.2 सामाजिक स्थिति

3.3 आर्थिक स्थिति

3.4 राजनीतिक स्थिति

3.4 अन्य समस्याएँ

अध्याय - 4 उपसंहार

संदर्भ सूची

भूमिका

मानव विचारशील तथा संवेदनशील प्राणी है। उसने अपने विचारों की सहायता से निरंतर स्वयं को सभ्य तथा संस्कृत बनाने का प्रयत्न किया है। इतना ही नहीं तो समाज के रूप में एकत्रित रहते हुए एक - दूसरे को किसी की प्रकार की तकलीफ न हो, इसे ध्यान में रखते हुए अनेक सामाजिक, राजनैतिक व्यवस्थाओं का निर्माण भी किया है। इन जटिल व्यवस्थाओं में जीवनयापन करते समय बाह्य विकास के लिए आर्थिक तथा आंतरिक विकास के लिए सांस्कृतिक तत्वों की निरंतर आवश्यकता होती है। अतः आर्थिक विकास के साथ-साथ समाज का सांस्कृतिक विकास भी उतना ही महत्वपूर्ण होता है, इसमें कोई दोमत नहीं हो सकते हैं।

भारतीय समाज अपनी विविधांगी संस्कृति में अनेक तत्वों को समाएं हुए है। धर्म, दर्शन, तथा कला इनमें मुख्य है। कला का ही एक अंग है साहित्य। लिखित साहित्य मुख्यतः लोक साहित्य का विकसित रूप है। भारत में लोकसाहित्य की एक महती परंपरा रही है। यह लोकसाहित्य प्रकृति से जुड़े होने के साथ ही साथ मानवीय समाज की चेतना का एक संबल रहा है। लोकनाट्य के माध्यम से मानवीय जीवन चेतना से जुड़ने की परंपरा में आध्यात्मिकता तथा मनोरंजन के द्वारा भावों के परिष्करण की विधि भारतीय समाज की एक अनन्य विशेषता है। उसी के आलोक में भारत में भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र ग्रंथ में नाट्य कला का विवेचन, विश्लेषण किया है। लोकनाट्य की परंपरा निंरतर विकासमान रही है, इसलिए वर्तमान समय में नाट्य कला में अनेक बदलाव और विकास हुए। लोकनाट्य की परंपरा की सुगंध भारत में सभी राज्यों में दिखाई देती। महाराष्ट्र भी उनमें से एक है। महाराष्ट्र में कीर्तन, लळित, गोंधळ, कळसूत्री बाहुल्या, तमाशा तथा दशावतार आदि का महत्वपूर्ण स्थान है।

किसी भी कला के विकास में कलाकारों का मुख्य योगदान होता है। कलाकार भी अंत में मनुष्य है, उसी समाज का अंग है। जिसके सामने वह अपनी कला प्रस्तुत करता है। वर्तमान में उन कलाकारों के समक्ष अनेक समस्याएं है। जिनके संदर्भ में प्रस्तुत अध्ययन में अंगुली-निर्देश किया जा सकता है।

किसी भी काल या देश में सामाजिक विकास के साथ-साथ मानव समाज में आनेवाली विषमताओं का मुख्य कारण आर्थिक व्यवस्था से ही जुड़ा है। आर्थिक व्यवस्थाओं के बदलते स्वरुप के कारण औद्योगिकीरण तथा संचार क्रांति से सांस्कृतिक तत्वों में भी निश्चित ही एक बदलाव आया है। सामाजिक ढाँचे में एक परिवर्तन स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है। भारत में जातिगत समाज रचना पुनः वर्गगत होने की ओर अग्रेसर है। समाज सामाजिकता से वैयक्तिकता की ओर मार्गकर्मण करता दिखाई देता है।

कार्ल मार्क्स ने सारी दुनिया को इस तथ्य से परिचित कराया है। सामाजिक विकास में उत्पादन के साधन भले ही एक वर्ग के पास हो, परंतु किसी समाज के संतुलित विकास में साधनों के वितरण की प्रणाली को मुख्य स्थान देकर अनेकानेक देशों की सरकारों ने इस व्यवस्था में अनेक बदलाव किए और मानवीय विकास को

योग्य दिशा की अग्रेसर करने का कार्य किया है। परंतु पूंजीवादी विचारधारा के विकास के साथ औद्योगिकीकरण तथा तकनीकीकरण ने मानव जीवन तथा समाज जीवन में सामाजिक विकास की परिभाषाएँ भी बदलने लगी हैं। इन बदलती व्यवस्थाओं के बीच मानव समाज का सहज- सरल जीवन जटिल होता जा रहा है। भीतर की मानसिक उथल-पुथल और सामाजिक जीवन सौंदर्य को बढ़ानेवाली सांस्कृतिक गतिविधियों के अभाव में उत्पन्न रिक्त ने मानव के तथा समाज के संतुलित विकास के समक्ष अनेक चुनौतियां उत्पन्न कर दी है।

प्रस्तुत अध्ययन में भारतीय लोकधर्मी लोककला लोकनाट्य के प्रकाश में महाराष्ट्र की लोककला गोंधळ-जागरण का विवेचन व विश्लेषण तथा उसके कलाकारों की आर्थिक-सामाजिक जीवन की वर्तमान स्थिति हमारे इस अध्ययन का मुख्य ध्येय है।

प्रस्तुत अध्ययन महाविद्यालय द्वारा क्षेत्र अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत प्रस्तुत करने में अफ्शां नाज शेख रशीद, आकांक्षा चरणदास मोटघरे, दिव्या सुनिलराव सरदार, फैजान सादिक शेख, हरविंदर सिंग, जुगिन्दर सिंग बावरी, कविता संजय पालीवाल, मालविका भरतराव कनोजिया, नौफिल खान इकबाल खान खान, नेहा नाज शेख रशीद, राहुल प्रकाश दहाट, रेहाना बी शेख कादिर, साजिद खान सुभान खान, सानिया नाज शेख पियारु, शाखरुख खान बाबर खान इन छात्रों ने सहभागिता निभाई है। गोंधळी श्री देवीदास मुदगल, श्री एकशेलम साहेम्बकर, एकनाथ साळुंके, दिनेश हादवे, संजय हादवे, दिगंबर साहेम्बक, स्वप्नील मांगे महत्वपूर्ण जानकारियां उपलब्ध करायी है, आप सभी का आभार मानते हुए, क्षेत्र अनुसंधान परियोजना की मंजुरी देने के लिए प्राचार्य डॉ. हरिभाऊ वेरुळकर को साधुवाद देना मैं अपना पुनीत कर्तव्य मानता हूँ।

डॉ.श्यामप्रकाश आ. पांडे

अध्याय - 1

सांस्कृतिक लोकनाटय - एक विश्लेषण

1.1 संस्कृति एवं सांस्कृतिकता -

संस्कृति शब्द संस्कृत भाषा के 'कृ' धातु (करना) से निर्मित है। इस धातु से तीन शब्द बनते हैं। प्रकृति (मूल स्थिति), संस्कृति (परिष्कृत स्थिति) तथा विकृति (अवनति स्थिति)। संस्कृति के पर्याय के रूप में अंग्रेजी शब्द Culture का प्रयोग किया जाता है। संस्कृति एक ऐसी परंपरागत विधि होती है, जिसमें मनुष्य सोचता है और कार्य करता है, जिसे मनुष्य ने उत्तराधिकार में प्राप्त किया होता है। संस्कृति के दो विभाग किए जा सकते हैं - भौतिक तथा अभौतिक। भौतिक संस्कृति मानव के भौतिक पक्षों से जुड़ी होती - जैसे वेशभूषा, भोजन, घरेलू सामान, रहन-सहन आदि। अभौतिक संस्कृति का सम्बन्ध विचारों, आदर्शों, भावनाओं और विश्वासों से है।

मानव जीवन में संस्कृति एवं सांस्कृतिकता का विशिष्ट स्थान होता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक मानव संस्कारों द्वारा परिचालित होकर सामाजिक नियमों के साथ समाज में जीवनयापन करता है। प्रत्येक देश में अलग-अलग रीति-रिवाजों के साथ संस्कार करने का कार्य समाज में किया जाता है। भारत में भी अपनी एक संस्कृति है, जिसे भारतीय संस्कृति के नाम से जाना जाता है। अनेक ब्रत, होली, दीपावली जैसे त्यौहार, जिसे भारत के अधिकतम हिस्सों में एक ही दिन मनाया जाता है, धार्मिक विधियां आदि साझा संस्कृति के उदाहरण है। अलग-अलग धर्म, जाति, रीति-रिवाज होते हुए भी भारत की अपनी एक साझा संस्कृति भारतीयों को आपस में बांधे रखने का कार्य करती है। यह भारतीयों द्वारा एक अनुभूत तथ्य है।

संस्कृति की अवधारणा को मानव ने भाषा के निर्माण के साथ ही समझने का प्रयास किया होगा, यह मानना योग्य ही है, क्यों कि संस्कार करने की क्रिया भाषा की उत्पत्ति से पूर्व ही आरंभ हो चुकी थी, यह सर्वविदित तथ्य है। मानव की उत्पत्ति के साथ ही मानव ने जीवन जीने के साधनों व स्वयं के परिष्करण हेतु प्रयास आरंभ कर दिए थे। यही परिष्करण की विधि संस्कृति के नाम से अभिहित की जाती है। खाद्य- अखाद्य वनस्पतियों की पहचान करना, गुफाओं को ढूंढना, उन्हें रहने योग्य बनाना, जानवरों से सुरक्षा के उपाय करना, अपनी सुरक्षा हेतु हथियारों का निर्माण करना। यह सब एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करना, ये सब संस्कारों के माध्यम से ही संभव हो सकता था। यह एक वैचारिक तथ्य है।

मानव समाज द्वारा संस्कृति के विभिन्न अंगों - यथा- कला, संगीत, धर्म, दर्शन, साहित्य, शिल्पकला तथा विज्ञान सभी का विकास और परिष्करण साथ-साथ किया जाता है। विज्ञान जहां मानव के भौतिक विकास को गति देता

है, वही अन्य सभी मानव के मानसिक और वैचारिक चेतना पक्ष को मजबूत बनाने का कार्य करते है तथा मानवीय मूल्यों तथा आदर्शों में निर्माण होनेवाली बाधाओं तथा अनिष्ट रुढ़ियों को दूर किया जाकर संस्कृति को निरंतरता तथा गतिशीलता प्राप्त होती है।

भारतीय समाज भी अपनी सांस्कृतिक परंपराओं के प्रति सजग समाज है। भारत में भी मानवीय चेतना के परिष्करण हेतु विशिष्ट कलाओं के साथ लोककलाओं का उद्‌भव सर्व सामान्य द्‌वारा किया गया है। लोकगीत, लोकसंगीत, लोकनाट्‌य की परंपरा भारत में सर्वत्र दिखाई देती है। प्रदेश एवं विभिन्न भाषायी समाजों के अनुरूप यह अलग-अलग होती है, जिसका अध्ययन यहां हम करेंगे।

1.2 लोकनाट्‌य का अर्थ एवं परिभाषाएं - लोकनाट्‌य दो शब्दों से मिलकर बना है, लोक और नाट्‌य। लोक अर्थात्‌ जनसामान्य के द्‌वारा अपनाई गई कृति को लोक के समक्ष नाट्‌य रुप में प्रस्तुत किया जाता है तो वह लोकनाट्‌य कहलाता है। आचार्य भरतमुनि के नाट्‌यशास्त्र में लोकचित्त को ही नाटकों की वास्तविक प्रेरणा भूमि तथा कसौटी माना गया। लोकनाटक अथवा लोकनाट्‌य लोकसाहित्य की सर्वाधिक प्रसिद्‌ध विधा है, जिसका लोक जीवन से घनिष्ठ व सीधा संबंध है। लोकनाटय को अनेक विद्‌वानों ने परिभाषित करने का प्रयत्न किया है, जो निम्न प्रकार से है -

डॉ. श्रीराम शर्मा के अनुसार, "वह नाटक लोक नाटक कहलाता है जो लोक स्वभाव से उत्पन्न होकर, लोक चित्त में रमता हुआ, लोक धर्म के निर्वाह के साथ लोक सिद्‌धि को प्राप्त करता है।"[1]

डॉ. श्याम परमार के अनुसार, "लोकनाट्‌य से तात्पर्य नाटक के रूप से है जिसका संबंध विशिष्ट शिक्षित समाज से भिन्न सर्वसाधारण के जीवन से हो और जो परंपरा से अपने अपने क्षेत्र के जन समुदाय के मनोरंजन का साधन रहा हो।"[2]

डॉ. नगेंद्र के अनुसार, "लोक नाटक सामूहिक आवश्यकताओं और प्रेरणाओं के कारण निर्मित होने से लोक कथानको, लोकविश्वासों और लोक तत्वों को समेटे हुए चलता है और जीवन का प्रतिनिधित्व करता है।"[3]

डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार, "लोकधर्मी रूढ़ियों की अनुकरणात्मक अभिव्यक्तियों का वह नाट्‌यरूप जो अपने अपने क्षेत्र के लोकमानस को आह्‌लादित, उल्लासित और अनुप्राणित करता है लोकनाट्‌य कहलाता है।"[4]

डॉ. सत्येंद्र के अनुसार,"लोक रंगमंच लोक की अपनी वस्तु है। यह व्यवसायार्थ नहीं होता। इसके अखाड़े अवश्य होते हैं। ये अखाड़े समस्त रंगमंच के अनुष्ठान को गुरु शिष्य की गांठ में बांधकर खड़े होते हैं।"[5]

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि लोक नाट्य का संबंध शिक्षित समाज से भिन्न सर्वसाधारण के जीवन से है। लोकनाट्य में लोक कथानक, लोक विश्वास और लोक तत्व समाविष्ट होते हैं और वह लोकमानस को आल्हादित, उल्लासित और अनुप्राणित करता है। लोकनाटक मनोरंजन और लोक-शिक्षा का महत्वपूर्ण साधन है। कुल मिलाकर यह लोक की अपनी वस्तु होती है।

1.3 लोकनाट्य के प्रकार - हमारे देश में नाट्यकला प्राचीन काल से चली आ रही है, भरतमुनि के नाट्यशास्त्र की प्राचीनता के आधार पर यह स्वसिद्ध है। लोकनाट्य की परंपरा का इतिहास तो निश्चित ही उससे भी प्राचीन है। भारतीय सामाजिक उत्सवों, मेलों, त्यौहारो तथा धार्मिक उत्सवों तथा संस्कारों में इन्हें देखा जा सकता है। सभ्यता के विकास के साथ ही मनोरंजन के साधन के रुप में इनका विकास तथा लोकशिक्षा के साधन के रुप में लोकनाट्यों का उपयोग करने की परंपरा निरंतर गतिशील रही है। नाट्यशास्त्र के संदर्भ में विद्वान लिखते हैं कि "लोक-नाट्य का आधार कोई नाटक होता है और यह प्रतीत होता है कि लोकमानस से ओतप्रोत लोकनाट्य अनादि प्रागैतिहासिक काल में जन्म लेकर काल के विशेष अवरोधो को चीरता हुआ आज तक लोक में प्रचलित है, उसी लोकनाट्य के ऊपर नाटक और नाट्यशास्त्र खड़ा होता है।"[6]

भारत के अलग-अलग प्रदेशों में लोकनाट्य के भिन्न-भिन्न प्रकार दिखाई पडते हैं। यो तो बोली तथा भाषा, भौगोलक परिस्थितियों, रंगमंच, लोकनाट्य के तत्व, पर्व या उत्सव, उद्देश्य, अभिनय, वाद्य, आदि अनेक आधारों पर लोकनाट्यों के भेद बतलाएं जा सकते हैं। भारत के सभी जनपदों के लोकनाट्यों को ध्यान में रखते हुए तीन प्रमुख भेद पाये जाते हैं -

1. नृत्य प्रधान लोकनाट्य,
2. संगीत प्रधान लोकनाट्य,
3. स्वांग प्रधान लोकनाट्य,

1. नृत्य प्रधान लोकनाट्यों में नृत्य तत्व की प्रधानता होती है। राजस्थानी भीलों का गबरी, आन्ध्र के पहाडी आदिवासियों का कुरबंजि, बिहार का विदेसिया, असम का अंकिया, ब्रज का रास, बंगाल का नकाब, मिथिला का कीर्तनिया आदि इसी वर्ग में आते है।

भीलों का गवरी लोकनाटय - राजस्थान

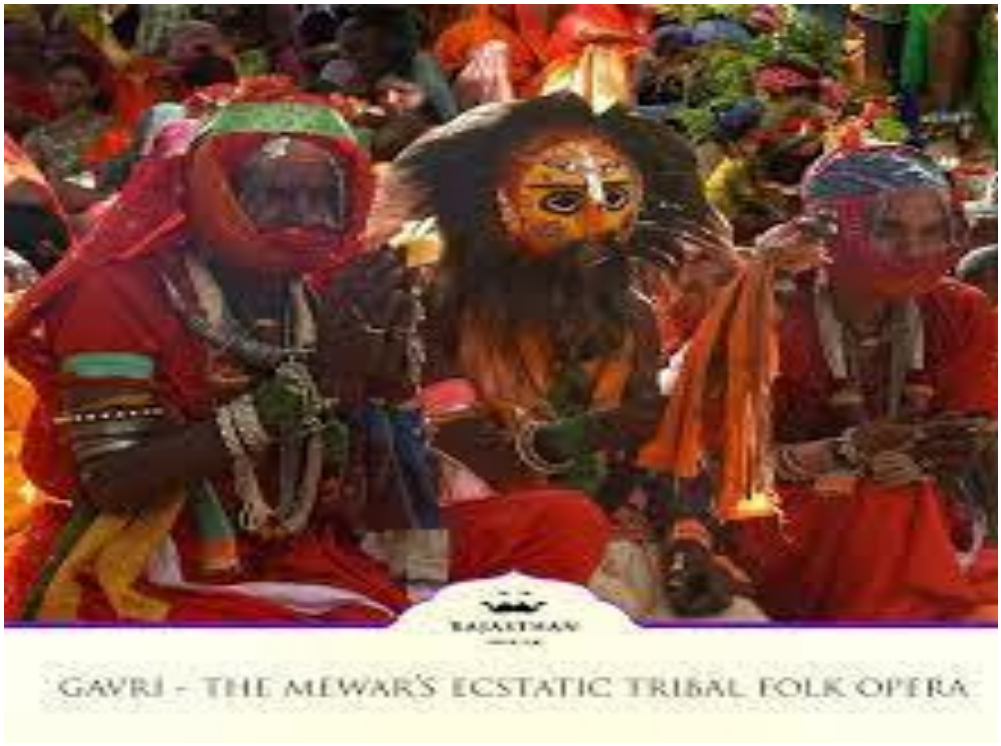

अंकिया लोकनाट्य - असम

रास लोकनाट्य - ब्रज

नकाब लोकनाटय - बंगाल

2. संगीत प्रधान लोकनाट्यों में शास्त्रीय संगीत, चलती गजल-कव्वालियां या लोक संगीत की प्रधानता रहती है। शेखावटी, चिढ़ावी, हेला जैसे दंगलों के आधार पर खेले जाने वाले राजस्थानी लोकनाट्य, महाराष्ट्र का तमाशा तथा तमिलनाडू का तेरुकूत्तु, नामक लोकनाट्य इसी वर्ग में आते हैं।

हेला ख्याल - राजस्थान

तमाशा - महाराष्ट्र

तेरुकूत्तू - तमिलनाडू

3. स्वांग प्रधान लोकनाट्यों में अभिनय, स्वांग, नकल प्रमुख होते हैं। ब्रज का भगत, उत्तर प्रदेश का नकल, हिमालय का करियाला, हरियाणा का सांग, गुदराज का भवाई वेश, उत्तर बिहारी महिलाओं का जट-जटिन, राजस्थान का बहूरूपिया, आदि इस वर्ग में आते हैं।[7]

भगत लोकनाट्य - ब्रज

सांग - हरियाणा

भवाई - राजस्थान, गुजरात

जट-जटिन - पश्चिमी उत्तर प्रदेश

बहुरूपिया - महाराष्ट्र

उनके अलावा भी अनेक लोकनाट्य भारत में विभिन्न भागों में प्रचलित है। जिनका अध्ययन अभी भी पूर्ण नहीं हो पाया है।

भारत के अन्य राज्यों की तरह महाराष्ट्र में लोकनाट्य की एक समृद्ध परंपरा है। महाराष्ट्र में लोकनाट्य की अपनी परंपरा रही हैं, इन लोकनाट्यों में मुख्य है - कीर्तन, लळित, गोंधळ, कळसूत्री बाहुल्या, तमाशा तथा दशावतार आदि। इन लोकनाटयों की लौचिकता विलक्षण है। इन लोकनाट्यों में धर्मश्रद्धा का स्थान महत्वपूर्ण है। किसी भी नाट्यमयी विधा हेतु लोकनाट्य शब्द का प्रयोग सामान्य रुप में किया जाता है। किंतु सभी विधाओं एक ही प्रकार में रखना योग्य नहीं होगा। महाराष्ट्र के उदा. के तौर पर कहा जाये तो खंडोबा या देवी का गोंधळ अथवा जागरण विधिनाट्य है। तमाशा लौकिक (विधि मुक्त) लोकनाट्य है। कोंकण व गोवा के दशावतार तथा खेळ विधिनाट्य और लोकनाट्य की सीमा रेषा पर स्थित है अर्थात् दोनों के गुणों का समन्वय इनमें दिखाई देता है।[8]

1.4 लोकनाट्य के विशेषताएं - लोकनाट्य का विवेचन व विश्लेषण करने के पश्चात् अनेक विद्वानों ने लोकनाट्य की विशेषताओं के वारे में बतलाया है, जिनका अध्ययन करने के उपरांत कुछ सामान्य विशेषताओं को हम वतला सकते हैं। ये विशेषताएं निम्न प्रकार से हैं–

1. सामान्यतः लोकनाट्य लोकगाथाओं पर आधारित होते है।
2. लोकजीवन से जुड़े होने के कारण लोकतत्व की प्रधानता होती है।
3. इनमें सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताओं का निरुपण होता है।
4. पात्र अक्सर लोकगाथाओं से ही लिए जाते है। इसलिए अलग चरित्रो की सृष्टि करने की आवश्यकता कम ही होती है।
5. हास्य- व्यंग्य के लिए विचित्र वेशभूशा, हावभावों की सहायता ली जाती है।
6. मनोरंजन के लिए विदूषक की व्यवस्था होती है।
7. नृत्य और संगीत के साथ भाव-भंगिमाओं पर अधिक ध्यान होता है।
8. संवादों को काव्यात्मकता का पुट दिया जाता है।
9. संवादों के प्रभाव वृद्धिगत करने हेतु लोक संगीत तथा विविध वाद्यों का समावेश कर उनसे सहायता ली जाती है। संवादों को रटने की बजाय सहज संवाद का सहारा लिया जाता है।
10. सामान्यतः स्थानीय भाषा का प्रयोग ही किया जाता है।
11. शैली नाट्यपूर्ण या विधिपूर्ण होती है।
12. अभिनय में स्त्रियों की भूमिका भी अक्सर पुरुष ही निभाते है।
13. एक ही व्यक्ति अनेक भूमिकाओं में कार्य करता है।
14. रंगभूमि एक सामान्य-सा परदा बांधकर तैयार की जाती है। [9]

संदर्भ सूची -

1. डॉ. सुनिता शर्मा, (https://sunitasharmahpu.wordpress.com/2020/12/10/lok-natak-ka-arth/)
2. वहीं
3. वहीं
4. वहीं
5. वहीं
6. डॉ.सत्येन्द्र, लोकवार्ता की पगडंडियां, भारतीय लोककला मंडल, उदयपुर, प्र.सं.19764
7. लोक साहित्य (MAHIND-403), पृ.सं.86-87, राजीव गांधी विश्वविद्यालय दूरस्थ शिक्षा केन्द्र, अरुणाजल प्रदेश, भारत
8. मराठी विश्वकोश - https://vishwakosh.marathi.gov.in/32118/
9. डॉ. गौतम नीरजा - HND_P6_M22, e PG पाठशाला, MHRD, महात्मा गाधी अंतर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय,

अध्याय - 2

महाराष्ट्रीय लोकनाट्य परंपरा एवं गोंधळ

2.1 महाराष्ट्रीय लोकनाटय परंपरा – महाराष्ट्र सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध राज्य है। महाराष्ट्र लोकधर्मी लोककलाओं के क्षेत्र में भी उतना ही समृद्ध राज्य है। महाराष्ट्र के ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न सामाजिक समूह इन लोक कलाओं को आज भी संभाल रहे हैं। मानवीय जीवन की भावनात्मक व व्यावहारिक जरुरतों की पूर्ति इन्हीं लोककलाओं के माध्यम से होती है। लोककलाओं में लोकधर्मी नाट्य का प्रमुख स्थान होता है। कुछ लोकधर्मी नाट्यों में विधि तथा धर्मश्रद्धा को प्रधानता मिली है तो कुछ में मनोरंजन को प्रमुख स्थान दिया गया है। कुछ दोनों की सीमाओं पर स्थित है। डॉ.तारा मावळकर के अनुसार "लोकधर्मी नाट्य में रंजनमूल्य कम-अधिक होते ही है। परंतु धर्मश्रद्धा से आज भी भारतीय मन मुक्त नहीं है।"[1] यह सर्वविदित है कि भारतीय समाज आज भी परंपरागत जीवन जीने वाला समाज है। अपने-अपने ईष्ट देवों के माध्यम से ईश्वर के प्रति श्रद्धा रखनेवाला और निरंतर उनसे जुड़ा समाज है। इसी के आधार पर मराठी लोकधर्मी नाट्यों का तीन श्रेणियों में वर्गीकरण किया जा सकता है -

1. गोंधळ - जागरण जैसे विधि नाट्य,

गोंधळ

जागरण

2. ललीत, पंचमी, दशावतार, भारूड, नाम, कीर्तन जैसी धार्मिकता की ओर रूख रखनेवाले तथा लोकरंजन और लोकशिक्षा की ओर झुके हुए लोकधर्मी नाट्य,

लळित

दशावतार

भारूड

कीर्तन

3. मनोरंजन प्रधान तमाशा जैसे लोकनाट्य।

तमाशा

लोकनाट्य और लोकजीवन का परस्पर संबंध श्रद्धा तथा हृदय का है। इसलिए लोकजीवन में आनंद की लहरे इन लोककलाओं, नाट्य प्रयोगों के माध्यम से ही आती है। त्यौहार, उत्सव, विधि, कुलाचार, देवस्थानों पर लगने वाले मेलों आदि स्थानों पर इन लोकनाट्यों के प्रयोग किए जाते हैं। इससे रोजमर्रा की परिस्थितियां, निराशा, जीवन के दुःख भूलाकर जीवन में रसमयता तथा आनंद का निर्माण होता है। यही कारण है आज भी ये कलाएँ जीवंत है।

2.2. **गोंधळ** - गोंधळ एक विधि नाट्य है, विधि नाट्य से तात्पर्य जिसमें विधि का स्थान महत्पपूर्ण होता है। घर में किसी मंगलकार्य होने के दौरान या पश्चात् कुलाचार के रुप में गोंधळ का आयोजन किया जाता है। इसमें संबंधित देवताओं के भक्तों को आमंत्रित करके उनसे यह कार्य संपन्न कराया जाता है। पारंपरिक रूप में गोंधळी जाति के लोग जो देवी भक्त के रुप में कार्य करते है। माँ रेणुका के भक्तों को रेणुराई तथा माँ तुळजा भवानी के भक्तों को कदमराई के नाम से पुकारा जाता है। गोंधळ की परंपरा के संदर्भ में वे परशुराम को रेणुकादेवी का प्रथम भक्त मानते हैं तथा परशुराम से ही गोंधळ परंपरा का आरंभ मानते है। गोंधळ विधि कुलाचार के संदर्भ में विद्वानों का मत है कि - "गोंधळ विधि कुलाचार के रुप में कब रुढ़ हुआ यह कहना तो मुश्किल है परंतु अभ्याकों का मत है कि तुळतापुर भवानी की प्राचीनता इ.स. 1000 तक दिखाई देती है और माहूर की रेणुका देवी तो उससे भी प्राचीन है। ये देवता जितने प्राचीन है उतनी ही पुरानी गोंधळ की परंपरा है।"[2]

कुलाचार के संदर्भ में जनसामान्य के मन में अवधारणा होती है कि कुलाचार करने से देवता प्रसन्न होते हैं तो नहीं करने से देवता नाराज होते है जिससे उनका प्रकोप सहन करना पड़ता है। घटस्थापना - गण - गौळण - देवताओं का आवाहन - नमन - भजन-कीर्तन अथवा लीलागायन - दर्शन - आरती - भार उतारना यह विधिनाट्य की रुपरेखा होती है। सामान्यतः गोंधळ, जागरण तथा भारूड इन तीनों प्रकार के विधिनाट्यों मे यही रूपरेखा होती है।

गोंधळ अब केवल विधि तक सीमित न रहकर विधि स्वरुप में नाट्य का प्रकार बन चुका है। इस नाट्य प्रकार को विकसित करने तथा उसके माध्यम से देवी के प्रति श्रद्धा जगाये रखने का कार्य गोंधलियों ने महाराष्ट्र में किया है।

गोंधळी समूह को वृंद कहा जाता है। गोंधळ के उत्तम, मध्यम व कनिष्ठ प्रकार बतलाए गए हैं। उत्तम वृंद में बत्तीस, मध्यम वृंद में सोलह तथा कनिष्ठ वृंद आठ लोगों का समूह होता हैं। महाराष्ट्र में आरंभिक प्रचलित गोंधळ में गोंधळियों की संख्या चार से आठ होती थी। वर्तमान में गोंधळ में कम से कम चार कलाकार होते हैं। एक संबल और एक तुनतुना वादक। एक मुख्य गायक

जिसे 'नाईक' कहा जाता है। और चौथा पात्र विदूषक जो अक्सर प्रदर्शन के दौरान उटपटांग प्रश्नों की बौछार कर दर्शकों को हंसाता है। ये सभी गायन में सामूहिक रूप से सम्मिलित होते हैं। मुख्य गायक, पहले गणपति और फिर देवी वंदना गाता है और अन्य सहायक गायक उन बोलों को दोहराते हैं। संवाद गीत ऊँचे स्वर में गाये जाते हैं और बीच-बीच में छोटे-छोटे भक्तिपरक और प्रहसनात्मक प्रसंगों का अभिनय प्रस्तुत होता है। कालान्तर में वीरोचित प्रसंगों का समावेश भी गोधळ के मंचन में हुआ।

गोंधळ यह विधिनाट्य होने से विधि यहां महत्वपूर्ण है। लोकनाट्य के तत्वों को रंगमचीय नाटकों की कसौटी पर नहीं आंका जा सकता है। परंतु समय के साथ गोंधळ के स्वरुप में बड़े बदलाव हुए है, गोंधळ की रंगमंचीय प्रस्तुति भी की जा रही है। कला के रुप में उसका विस्तार देश-विदेश तक दृष्टिगोचर होने लगा है। उसके संदर्भ में प्रा. डॉ. सविता माधवराव पवार का लिखती है कि - "आज पारंपरिक विधिनाट्यस्वरुपी कलाविष्कार को अभिजन वर्ग की मान्यता प्राप्त हो चुकी है। उसी प्रकार पारंपरिक कलाकारों के अभिजनों के संपर्क में आने से उसके प्रस्तुतीकरण में भी लक्षणीय बदलाव होने लगे है। एक नाट्य प्रकार के रुप में रंगभूमि पर गोंधळ का आयोजन होने लगा है। गोंधळ अब केवल देवी भक्तों की प्रेरणा से ही नहीं, कलाविष्कारों की प्रेरणा से भी प्रस्तुत किया जाने लगा है।"[3] वर्तमान में पारंपरिक तथा आधुनिक दोनों ही रूपों में गोंधळ का महत्वपूर्ण स्थान है। हम यहां दोनों रूपों को समझने का प्रयास करेंगे।

2.3. **गोंधळ के तत्व** - पारंपरिक गोंधळ का रुप भक्तिपरक होता है अतः गोंधळ के पूर्व रंग में घटस्थापना - गण - गौळण - देवताओं का आवाहन - नमन - भजन-कीर्तन अथवा उत्तर रंग में लीलागायन - दर्शन - आरती - भार उतारना आदि शामिल है। इसके संदर्भ में 'मराठी नाटयसृष्टि' में लिखा है कि विवाह के समय अथवा अन्य उत्सव कार्य में गोंधळ प्रस्तुति की पद्धति पहले होती थी, और आज भी कुछ जातियों में वह सुरक्षित है। विवाह संपन्न होने के पश्चात् परिवार के सभी लोग रात में मंडप में शांति से बैठने पर गोंधळी देवी के नाम की गोंधळ करते हैं। सर्वप्रथम किसी चौरंग पर चोली का कपड़ा बिछाकर उस पर अक्षत् फैलाते है। तत्पश्चात् उस पर जल से भरा कलश एवं आम्र पल्लव रखे जाते हैं। पत्तों पर अक्षत् से भरी तश्तरी रखकर उसमें देवी का प्रतीक अथवा प्रतिमा रखी जाती है।

घटस्थापना तथा पूजन करते हुए

घर मालिक द्वारा देवी का पूजन

तत्पश्चात् घर मालिक द्वारा देवी का पूजन करने के बाद नाईक (प्रमुख गोंधळी) मशाल लिए अपने साथियों के साथ देवी के समक्ष बैठ जाता है। प्रथम मशाल की पूजा करने के बाद 'तुळझापुरचे भवानी गोंधळाला ये', तथा अन्य देवियों का नाम लेकर उनका आवाहन करते है। नाईक के पीछे संबळ, तुनतुना तथा झांज बजाने वाले गोंधळी बैठते हैं। स्तोत्र तथा पोवाडे गाने में वे नाईक का साथ देते है। गोंधळ की समाप्ति के पूर्व ही एकाध गोंधळी के शरीर में देवी का संचार होता है। तत्पश्चात् देवी की आरती करके मशाल को दुध अथवा घी में डूबोकर बुझाया जाता है तथा गोंधळ का समापन किया जाता है। [4]

संबल वादक

तुनतुना वादक

आधुनिक काल में गोंधळ के स्वरुप में जो बदलाव आया है उसे समझने के लिए मराठी नाट्य सृष्टि में प्रस्तुत यह मत महत्वपूर्ण है - "ललित तथा

तमाशे के अलावा गोंधल का संबंध भी मराठी रंगभूमि से जुड़ता है। कुछ गोंधली उत्तम नकल करते थे। ललित तथा तमाशे में विविध रूप बनाकर जैसी नकल करते है, वैसी गोंधळ में नहीं की जाती है। साधारण पोशाक में ही सामने आकर बोलचाल में ही अभिनय द्वारा किली की नकल गोंधली हूबहू करते हैं। ललित में प्रायः पौराणिक कथाओं पर नाट्य प्रस्तुत किया जाता है। तमाशा तथा गोंधल में समसामायिक परिस्थितियों तथा लोगों की नकल काव्यमयी भाषा में संवादों द्वारा प्रस्तुत करते हैं।"[5] गोंधळियों द्वारा नाट्य के दौरान कर 'करपल्लवी' का उपयोग कर लोगों में जिज्ञासा का भाव भी जागृत किया जाता है। करपल्लवी मूलतः हाथों की उंगलियों तथा अंगूठे का प्रयोग कर संदेश देने के लिए उपयोग की जानेवाली सांकेतिक भाषा होती है। गोंधळ में एक कलाकार करपल्लवी का प्रयोग कर कुछ इशारा करता है। तो दूसरा उसके इशारों में कही जाने वाली बात को स्पष्ट करने का कार्य करता है। इस प्रकार से मनोरंजन तथा सांकेतिक भाषा की शिक्षा जनसामान्य को दी जाती है।

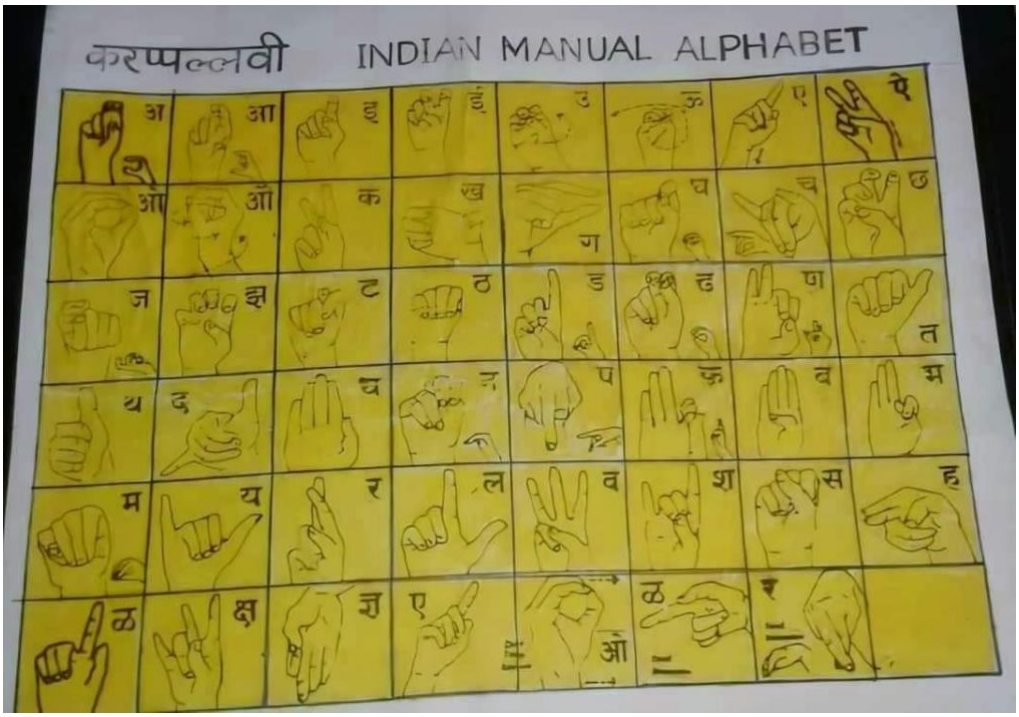

गोंधळ अब रंगमंचीय नाट्यकला बनने की अग्रेसर है। धीरे-धीरे इसका क्षेत्र व्यापक हो रहा है।

गोंधळ - रंगमंचीय मंचन

गोंधळ के तत्व नायकों के तत्व अलग होता है। यद्पि रंगमंचीय नाटकों के तत्व लागू नहीं किए जाते हैं, तथापि समझने में आसानी की दृष्टि से कुछ तत्वों का विवेचन हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं, ये तत्व निम्न हैं -

2.3.1 **कथानक** - गोंधळ यह विधिनाट्य होने से विधि यहां महत्वपूर्ण है कथा सामान्यतः लोकगाथा ही होती है। गोंधळ में पौराणिक, ऐतिहातिक, लोक गाथाओं तथा सामाजिक विषयों पर स्वरचित आख्यानों को प्रस्तुत किया जाता है। सर्वसामान्य लोगों की श्रद्धा जिन पर होती है, उसे नाट्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। गोंधळ में मूल कथानक के साथ अनेक उप कथानकों को भी प्रस्तुत किया जा सकता है। उपकथानकों का मूल कथानक से संबंध होगा, ऐसा भी अनिवार्य नहीं है। कथानक इतने लौचिक होते हैं कि प्रसंग तथा परस्थिति के अनुरुप उसका संक्षेप या विस्तार कर लिया जाता है। कथा अलिखित होने के कारण मूल कथा में किसी प्रकार का बदलाव न करते हुए आधुनिक रुप से उसमें बदलाव किया जाता है। आदर्श जीवन जीने की प्रेरणा देने वाले कथानक ही स्वीकार किए जाते हैं।

2.3.2. पात्र - गोंधळ में नाट्य कथानक की मांग के अनुसार पात्र रचना की जाती है तथा नाट्य-कलाकारों को सभी पात्रों के अभिनय की तैयारी रखनी पड़ती है। यदि समय पर कोई कलाकार शामिल न हो सके तो उसके स्शान पर दूसरा कलाकार उस पात्र का अभिनय कर सके। गोंधळ में रंगमंचीय नाटक कलाकारों की भाँति वेशभूषा नहीं धारण की जाती है। कलाकार अपने सामान्य वेशभूषा में अभिनय के माध्यम से पात्रों के हाव-भाव प्रस्तुत करते हैं। एक ही कलाकार अनेक पात्रों का अभिनय भी कर लेता है। गोंधळ में विदूषक का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण होता है।

2.3.3. संवाद - पात्रानुकूल संवादों की अदायगी की जाती है। गांवों में अनेक बार ध्वनि विस्तारक यंत्रों की व्यवस्था उपलब्ध न होने पर भी कलाकारों को नाट्य प्रस्तुत करना होता है। उपस्थित दर्शक व श्रोता समुदाय तक संवाद सुनाई पड़ने चाहिए, इसलिए कलाकारों को अभिनय के साथ तेज स्वर में अपने संवाद की अदायगी करने का अभ्यास भी करना पडता है।

2.3.4 भाषा-शैली - जनसामान्य के मध्य नाट्य प्रस्तुतियां होने के कारण संवाद सहज-सरल भाषा में ही होते हैं, जो सर्व सामान्य की समझ में आ सके। कथानक के बीच-बीच में विदूषक द्वारा अत्यंत विनोदी भाषा में होने वाले संवाद लोगों में हास्य रस की सृष्टि करते हैं, उन्हें गुदगुदाते हैं। श्रोता तथा दर्शकों में आनंद का संचार करते हैं।

2.3.5 उद्देश्य - लोकनाट्य का मूल उद्देश्य लोकरंजन ही होता है। लोकरंजन के साथ-साथ सामाजिक तथा नैतिक मूल्यों की शिक्षा जनसामान्य तक पहुँचाना तथा मानवीय मूल्यों की सृष्टि करना, आदि लोकनाट्य के सामान्य उद्देश्य माने जा सकते हैं। लेकिन अनेक लोकनाट्य अपने मूल उद्देश्यों से भटके भी है, जिससे उनपर सरकारों द्वारा प्रतिबंध भी लगाये गए। परंतु धार्मिकता से जुड़े हुए गोंधळ जैसे लोकनाट्य अपनी उद्देश्य पूर्ति में सफल रहे हैं।

2.4. गोंधळ की वर्तमान स्थिति - गोंधळ मूलतः धार्मिक विधि के साथ ही साथ गोंधळी जाति के लोगों का पेशा भी रहा है। गोंधळी जातियों में ऐसे अनेक कलाकार है, जिन्हें गीत-संगीत के साथ गोंधळ के माध्यम से रोजगार भी प्राप्त होता था। शुभ कार्य के अवसर पर अथवा मेलों के अवसर पर किये जाने वाले गोंधळ से उनका घर-परिवार भी चलता था। वर्तमान में उन जातियों के समक्ष अनेक समस्याएं निर्माण हुई है, जिससे उनके रोजगार पर असर पड़ा है। इनके कारणों को समझने के लिए गोंधळी श्री देवीदास मुदगल से लिए गए साक्षात्कार में अनेक मुद्दों पर अनौपचारिक बातचीत के मध्य कुछ कारणों पर चर्चा हो सकी, जो निम्न प्रकार से है -

1. उत्साह की कमी - वर्तमान में लोगों में उत्साह की कमी एक कारण है। औद्योगिकीकरण से भारत में भी शहरीकरण बढ़ा है। जहां अधिकतर नौकरीपेशा या व्यवसाय या मजदूरी में लगे लोग रहते हैं। लोगों को दिनभर मेहनत करनी पड़ती है। शाम में घर में पहुँचने समय तक वे थक चुके होते हैं। इससे शहरों में उत्साह की कमी एक कारण है।

2. मनोरंजन के अन्य अनेक साधनों की उपलब्धता - शहरों तथा गांवों में अनेक टी.वी. चैनलों के माध्यम से मनोरंजन की सामग्री घर-घर उपलब्ध होने से लोग घर बाहर जाकर किसी कार्यक्रम में शामिल होने से बचने लगे है। जिससे पहले की भांति मेलों का चलन भी बहुत कम हो चुका है।

3. आर्थिक भार - बढती महंगाई और आय के सीमित साधनों के कारण ऐसे कार्यक्रमों के आयोजन में कम रुचि रखने लगे है। साथ कार्यक्रम के आयोजन के बढ़ते खर्च भी आयोजन के कम होने के कारण है।

4. सोशल मिडिया - सोशल मीडिया से आभासी विश्व का निर्माण हुआ है। एकत्रित होकर सामाजिक कार्यक्रमों के आयोजन की पद्धति भी धीर-धीरे कम हो रही है। सोशल मीड़िया पर उपलब्ध कार्यक्रमों के विडियों से लोगों में बाहर

जाकर कार्यक्रम देखने की प्रवृत्ति शनै-शनै कम होती जा रही है। यह भी लोकनाट्यों के प्रति लोगों की रुचि कम होने के कारण हैं।

संदर्भ-सूची

1. तारा मावळकर, लोकनागर रंगभूमि, निहारा प्रकाशन, पुणे
2. डॉ. पाटील सुरेश, प्रा. पाटील सुनंदा, प्रा. कोठावडे सुधीर, लोकसाहित्य, य.च.म.मु.वि. नाशिक, पृ.19
3. डॉ.सविता मा.पवार, गोंधळ विधि नाटय : संकल्पना आणि स्वरूप, pune Research world - vol.1, Issue. 1, march 16-may 16, पृ.4
4., दांडेकर वि.पां., मराछी नाट्यसृष्टी - पौराणिक नाटके प्रकाशक - दांडेकर वि.पां, हाथीपोळजवळ, बडोदें, आ.प्र, इ.स.1941, पृ.48
5. वहीं

अध्याय - 3

आर्वी परिसर में गोंधळ कलाकारों (गोंधळी) की स्थिति

आर्वी तहसील अंतर्गत परिसर में अनेक गोंधळी परिवार रहते हैं। इनमें अलग-अलग जाति-समुदाय के लोग हैं। अपने परिवारों की पुस्तैनी परंपरा के अनुसार अपना जीवन-यापन करने की इच्छा आकांक्षा पाले त्यौहारों के अवसर पर अपने संबल और तुनतुना लिए लोगों के घरों में देवी गीत गाते दिखाई दे जाते है।

3.1 पारिवारिक स्थिति - गोंधळी जाति के परिवार, मूलतः गोंधळ की कला सीखकर अपने भरण-पोषण का आधार निर्माण कर जीवन जीने की कारण अन्य व्यवसायों की ओर आकृष्ट नहीं हुए थे। परंतु वर्तमान परिस्थितियों में अन्य व्यावसायिक गतिविधियों में शामिल होना तथा अपनी पुश्तैनी कला को छोड़ना उनकी मजबूरी बन चुकी है।

3.2 सामाजिक स्थिति - लोकनाट्य की परंपरा समाज से धीरे-धीरे कम होती जा रही है। इसी प्रकार इसका असर गोंधळ लोकनाट्य पर भी हुआ है। गोंधळियों की स्थिति सामाजिक रुप से कोई बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती है। विभिन्न जातियों के लोगों ने इस परंपरा से जुड़ कर सामाजिक तान-बाने में अपना स्थान बनाने का प्रयत्न किया था। अतः एक स्थान पर जुड़ अपने लिए संघर्ष करने की परिपाटी भी इनमें नहीं है।

3.3 आर्थिक स्थिति - जैसा की पहले भी अन्य अवसर पर चर्चा की जा चुकी है। गोंधळी समाज की स्थिति आर्थिक रूप से सुदृढ़ न होने के कारण ही उन्हें अपनी कला तथा व्यवसाय से अलग इतर व्यावसिक गतिविधियों की ओर जाना पड़ रहा है। जिससे गोंधळ की कला पर निश्चित ही असर हुआ है।

3.4 राजनीतिक स्थिति - लोकनाट्य में कार्यरत लोग अलग-अलग जातियों से आने के कारण राजनीतिक स्तर पर भी इनमे एकता का अभाव स्पष्ट दिखाई देता है। गोंधळी समाज राजनीतिक रूप से एकत्रित न होने कारण उनकी समस्याओं पर अभी भी राजनीतिक रूप से कोई ठोस उपाय किए जाने की आवश्कता निरंतर महसूस की जाती रही है।

3.4 अन्य समस्याएँ - इसके अलावा भी अनेकानेक समस्याएं लोकनाट्य कलाकारों की है, जिन पर विस्तृत अनुसंधान की आवश्यकता बनी हुई है।

उपसंहार

यह सर्वमान्य तथ्य है कि भारत में लोकनाट्यों की परंपरा अत्यंत प्राचीनकाल से चली आ रही है। भारत के भिन्न-भिन्न राज्यों में लोकनाट्य के अनेक प्रकार देखे जा सकते है, अनेक राज्यों में लोकनाट्य पर किए गए अनुसंधानों से स वात की पृष्टि होती है। महाराष्ट्र में भी लोकनाट्यों की समृद्ध परंपरा है। जो सदियों से विकसित हो चली आ रही है। इनमें गोंधळ लोकनाट्य भी है। जो मूलतः विधि नाट्य के रुप में जनसामान्य के मध्य प्रचलित रहा है। अनेक परिवारों में यह परंपरा आज भी मनोयोग से पूरी की जाती है, यह एक सर्वज्ञात तथ्य है।

गोंधळ लोकनाट्य पर किए गए अनुसंधान से सिद्ध हो चुका है कि रेणुकादेवी तथा तुळजा भवानी के भक्तों द्वारा गोंधळ का आरंभ किया गया था। समय के साथ-साथ गोंधळ की परंपरा में अन्य देवी-देवताओं के गोंधळ का समावेश भी हुआ है, इसके संदर्भ में ज्ञात रहे कि अनेक स्थानों पर अलग-अलग देवी-देवताओं के भक्तों द्वारा की जा रही विधि को गोंधळ के नाम से ही अभिहित किया जा रहा है।

औद्योगिकीकरण तथा संचार क्रांति का लोकनाट्य की परंपरा पर बहुत असर हुआ है। लोकनाट्य की परंपराएं जहां सोशल मीडिया के माध्यम से घर-घर पहुंची है। वहीं इसके कलाकारों और भक्तों के लिए अनेक समस्याएँ भी पैदा हुई है, जिससे उनके रोजगार पर बुरा प्रभाव पड़ा है। जिससे गोंधळ के कलाकार अपनी आजीविका के लिए अन्य साधनों की रुख करने लगे है। अतः लोकनाट्य की परंपरा धीरे-धीरे कम होती जा रही है। आज अकादमिक स्तर पर पाठ्यक्रमों में इसे पढ़ाया जा रहा है। लोकनाट्यों की ओर रुख करने वाले छात्रों या गंभीर होकर इसे व्यवसाय के तौर अपनाने वालों की एक पूरी पीढ़ी तैयार करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। साथ रोजगार के अभाव में लोकनाट्य परंपरा के कलाकारों के लिए साधनों की उपलब्धता करायी जानी चाहिए।

गोंधळी श्री देवीदास मुदगल, श्री एकशेलम साहेम्बकर, एकनाथ साळुंके, दिनेश हादवे, संजय हादवे, दिगंबर साहेम्बकर के साथ मुलाकात, साथ में स्वप्नील मांगे व डॉ. श्यामप्रकाश पांडे